प्रवचन

परमहंस श्री हंसानंदजी सरस्वती दण्डी स्वामीजी

विषय तालिका

CD # 48 * SEP + OCT 2011 *

(B)

SN	Title	Min	Coding			Contents	
						(b) @ Oct 2011	
1	Oct-01	35				**अथर्ववेद-मा०उ०** :: **'अयं आत्मा ब्रह्म'** = हमारा तुम्हारा स्वरूप आत्मा ब्रह्म है, जो ब्रह्म है वही हमारा आत्मा/स्वरूप है यानि आत्मा और ब्रह्म एक ही है। ब्रह्म में छाया के समान अज्ञानरूप माया/सुषुप्ति से ही जा०स्व० के देह उत्पन्न होते हैं इसलिये सु० कारण तथा जा०-स्व० उसके कार्य **हैं। 'कार्यउपाधि' से जा०+स्व० देहों के भीतर ब्रह्म ही जीवात्मा कहलाता है और सुषुप्ति में देहों के बिना 'माया' अथवा 'कारण उपाधि' से वही ब्रह्म ईश्वर या परमात्मा कहलाता है** (दृष्टान्त-घटाकाश और महाकाश)। जा०-स्व०-सु० ही माया है जिसे ज्ञान नहीं है तथा चौथा जो जा०-स्व०-सु० को जानता है वह ज्ञानवान ही बह्म है। जा०-स्व०-सु० कारण-कार्य दोनों उपाधियों को छोड़कर हम ज्ञान स्वरूप ही रह जाते हैं। हमारा तुम्हारा स्वरूप ज्ञान है और मायाकृत देहों का स्वरूप अज्ञान है। ये शरीर पंचभूत से बने हैं इन्हें ज्ञान नहीं है तथा इनमें व्यापक मैं ही इन्हें देखता हूँ। जड़ देहरूपी मन्दिर में देव जीवात्मा सच्चिदानंद ब्रह्म है :: Quotes :: 'नाहं मनुष्यो न च देव यक्षो...':: 'देहो देवालय प्रोक्ता...' :: 'एको देवः सर्व भूतेषु गूढ़:...' :: 'आत्मा साक्षी विभु पूर्ण एको मुक्तः चिदक्रिया, असंगो निष्पृह शान्तः भ्रमात् संसारवान् इव'	अति उत्तम + विशेष
2	Oct-02	42				शास्त्र में पाँच माताओं का वर्णन :: १ **जननी** २ जन्मभूमि ३ सुरभी ४ ज्हान्वी ५ वेद, मंदालसा द्वारा पुत्रों को ज्ञान का प्रसंग	१
3	Oct-03	47				शास्त्र में पाँच माताओं का वर्णन :: १ **जननी** २ जन्मभूमि ३ सुरभी ४ ज्हान्वी ५ वेद - भगवान की वाणी वेद है, वेद सबसे बड़ी माता है क्योंकि वह भगवान का ज्ञान कराती है।	२
4	Oct-04	47				शास्त्र में पाँच माताओं का वर्णन :: १ **जननी** २ जन्मभूमि ३ सुरभी ४ ज्हान्वी ५ वेद - भगवान की वाणी श्रुतिमाता अपने पुत्रों की मृत्यु का दुःख नहीं देख सकती, ये जीतेजी ही पुत्रों को भगवान के दर्शन करा देती है और जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त कर देती है। वेद बताता है कि भगवान आनंद सिन्धु हैं और हमारी तुम्हारी आत्मा उनकी लहरें हैं। भगवान एक हैं व जीवात्मा अनेक हैं किन्तु उनसे अलग नहीं हैं। भगवान सदैव ही जीवात्मा के साथ हैं जैसे जल तरंग के।	३
5	Oct-05	60				**अध्यात्म रामायण/प्रथम सर्ग/राम हृदय** :: **'त्वद्रूपं ज्ञातुमिच्छामि...'** भगवान राम से हनुमानजी ने कहा कि प्रभु आपके ससा० स्वरूप की तो मैं नित्य सेवा करता हूँ किन्तु मैं आपके निनि० स्वरूप को नहीं जानता, ऐसा भी मैंने सुना है कि जो उसे जानता है वह जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है अतः आप मुझे अपना निनि० स्वरूप बतायें, इसपर भगवान राम की आज्ञा से सीताजी द्वारा राम का निनि०स्वरूप निरूपण :: **'रामं विद्धि परमब्रह्म सच्चिदानंद अद्वयं, सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं सत्तामात्रं अगोचरं'**	अति १ उत्तम
6	Oct-06	44				**अध्यात्म रामायण/प्रथम सर्ग/राम हृदय** :: सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण - ' रामं विद्धि परमब्रह्म...' अब प्रसंग से मेरा भी स्वरूप सुनो - **'मामु विद्धि मूलप्रकृति सर्गस्थित्यंतकारिणी, तस्य सन्निधिमात्रेण सृजामेद् मतन्विता'**। ये जगत मेरा रूप है और सब देहों में बैठकर देखने वाले राम हैं। राम मुझ मूलप्रकृति माया के ३ गुण व उनके कार्य दे०इ०म०वु० सबसे सर्वथा असंग ही रहते हैं। राम अकर्म हैं व सारे कर्म मुझ प्रकृति में ही हैं।	२
7	Oct-07	32				**भगवान राम का उपदेश** :: हे अयोध्यावासियो ! मैं संत, पुराण और वेदमत कहता हूँ - वही मेरा प्रिय सेवक एवं मुझे प्रिय है जो मेरा अर्थात् वेद का अनुशासन मानता है। ये मनुष्य शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है क्योंकि देवयोनि केवल भोग भूमि है कर्मभूमि नहीं है और मनुष्य ये दोनों है। देवता भारत-भूमि में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों से ईर्ष्या करते हैं क्योंकि भारत धर्म-प्रधान देश है जबकि अन्य देश भोग-प्रधान हैं अतः इस देह का फल विषय-भोग नहीं है क्योंकि विषय-भोग का अन्त दुःखदायी है। जो मनुष्य इस जन्म में भक्ति, ज्ञान और भगवान को प्राप्त नहीं करता वह ८४ लाख योनियों में भटकने का दुःख पाता है। भोग में लीन मनुष्य मानो मनुष्य देहरूपी पारस-मणि को छोड़कर विषय-भोगरूपी विष ही ग्रहण करते हैं। भगवान की कृपा से नर शरीर प्राप्त होने पर मनुष्य वेद पुराण का अध्ययन कर अपना कल्याण कर सकता है। ये देह नौका के समान है और शास्त्र/गुरु कर्णधार है अतः हे नगरवासियों ! यदि परलोक और इस जीवन में सुख चाहते हो तो मेरे वचनों को धारण करो।	३
8	Oct-08	45				**अध्यात्म रामायण/प्रथम सर्ग/राम हृदय** :: सीताजी द्वारा राम का निनि०स्वरूप निरूपण :: राम का निनि० स्वरूप सच्चिदानंद ब्रह्म हैं, वे निरुपाधिक सर्वव्यापक अद्वितीय असंग सब जीवों की आत्मा / स्वरूप हैं। अब **प्रसंग से मेरा भी स्वरूप सुनो :-** मेर स्वरूप महामाया शक्ति है। मेरा काम जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार है। असंग राम मुझे स्पर्श नहीं करते किन्तु उनके सानिध्य मात्र से ही मैं जड़ प्रकृति राम से सत्ता-स्फूर्ति पाकर जगत के रूप में परिणित हो जाती हूँ। सभी कर्म मुझमें हैं, राम अकर्म अकर्ता अभोक्ता हैं। **'अद्भुत रामायण - सहस्त्रमुख रावण की कथा'** ।	४
9	Oct-09	31				वेद के अनुसार बह्म का स्वरूप निरूपण :: आदि-अन्त रहित एवं जो सदा रहता है वह **सत्** है। **चिद्** नाम अनादि-अनंत-अखंड ज्ञान का है व जिसमें **आनंद** भी अनादि-अनंत है अतः ब्रह्म का स्वरूप **सच्चिदानंद** है। ब्रह्म यानि हमारा आत्मा पुरुष है जिससे छाया के समान माया प्रकट हुई - हमारे शरीर छायारूप ही हैं **:: ब्रह्मोपनिषद में सृष्टिक्रम ::** :- ब्रह्म → अव्यक्त/महामाया शक्ति → महत् तत्त्व/स०बुद्धि → अहं तत्त्व/स०मन → पंचतन्मात्रा → पंचमहाभूत → अखिलं जगत	उत्तम दृष्टांत
10	Oct-10	45				**गीता - १५/१ ::** सीता और राम जगत के माता-पिता हैं अतः ये जगत सीताराम का ही स्वरूप है। जैसे एक बीज ही पृथ्वी की सहायता से वृक्ष का रूप धारण कर लेता है उसी प्रकार 'एक' ब्रह्म ने ही अपनी माया से विश्व-विराट का रूप धारण कर लिया है। भगवान की सत्ता पाकर भगवान की महामाया शक्ति/प्रकृति ही जगत का रूप धर लेती है। ये संसार एक पीपल का वृक्ष है जिसका मूल भगवान सबसे ऊपर हैं और उनके नीचे उनकी महामाया शक्ति/प्रकृति है जिससे छायारूप विश्व-विराट उत्पन्न हो जाता है :: ऊर्ध्व में अविनाशी बीज भगवान → माया/प्रकृति → ब्रह्मा/अधः शाखा → उपशाखारूप सारी सृष्टि - जिसके कर्मकाण्ड/वेद-पत्ते, शुभाशुभ कर्म-फूल तथा सुख-दुःख फल हैं आत्मा में → निद्रा/माया → सूक्ष्म सृष्टि/स्वप्न जगत → जागृत जगत/विश्व-विराट → विपरीत क्रम से सृष्टि लय → अन्त में एक आत्मा ही शेष। अतः द्रष्टा आत्मा ही सत् है तथा दृष्यमान जा०-स्व०-सु० रूप माया असत् है . Also see Q&N - III/14	अति उत्तम
11	Oct-11	28				सृष्टि के आदि में एक परमब्रह्म परमात्मा ही थे जिनसे पुरुष में छाया अथवा रज्जु में सर्प के समान एक माया का प्रादुर्भाव हुआ जिसने शुद्ध-सत्वगुण की प्रधानता से **'विद्या'** और मलिन-सत्वगुण की प्रधानता से **'अविद्या'** का रूप धारण किया। विद्यामाया में पड़ा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब-सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान **ईश्वर** कहलाया तथा अविद्या में पड़ा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब-अल्पज्ञ अल्पशक्तिमान **जीव** कहलाया **तैत्तीय उप० में सृष्टिक्रम** :- परमात्मा/आत्मा → आकाश → वायु → अग्नि → जल → पृथ्वी → औष धियाँ-आम, अनार आदि → अन्न-गेहूँ, जौ, चना आदि → वीर्य → पुरुष/अखिल जगत **सात धातुरें :-** १ रस २ रक्त ३ माँस ४ मेदा ५ अस्थि ६ मज्जा ७ शुक्र **::: सविस्तार गर्भोपनिषद :::**	
12	Oct-12	40				**सामवेद/छा०उ०/६टा अध्याय/उद्दालक -श्वेतकेतु सम्वाद** :: हे पुत्र क्या तुमने वह विद्या पढ़ी है जिस एक को जानने से सब कुछ जाना हुआ हो जाता है व कुछ भी जानना शेष नहीं रहता, अविज्ञात ज्ञात हो जाता है, जो कभी नहीं देखा या सुना हो वह	अति

			⊕	⊕	⊕	देखा-सुना हुआ हो जाता है :: उपदेश :: हे पुत्र ! जिसप्रकार एक मिट्टी को जान लेने से संसार भर के घट-मठ जान लिये जाते हैं, जो माटी से बने हैं और अंत में माटी में ही मिल जायेंगे यानि आदि-अंत में केवल माटी ही है, नाम-रूप भिन्न-२ होते हुए भी माटी से भिन्न कुछ भी नहीं है। ऐसे ही सभी आभूषण स्वर्ण से भिन्न नहीं हैं :: जगत का कारण ब्रह्म है एवं जगत उसका कार्य है। कार्य अपने कारण से भिन्न नहीं होता। ब्रह्म सत्य है और ये जगत उसमें नाम-रूप की कल्पना मात्र है। सृष्टि के आदि में एक सच्चिदानंद ब्रह्म ही था उसी से ये सब सृष्टि भयी है इसलिये ये चराचर जगत परमात्मा का ही रूप है :: **सृष्टि क्रम** :: ब्रह्म → आकाश → वायु → जल → पृथ्वी → अखिल जगत :: पंचभूतकृत नामरूप को ही जगत कहते हैं अतः हे पुत्र जब भगवान सबके कारण हैं तो हम भगवान से भिन्न कैसे हो सकते हैं। भगवान सच्चिदानंद सिन्धु हैं और हम सभी भूत-प्राणी उस आनंद सिन्धु की लहरों के समान हैं अतः एक ब्रह्म के ज्ञान से सबका ज्ञान हो जाता है। **'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या जीवौ ब्रह्मैव न परा'** - क्योंकि कार्य अपने कारण में कल्पित होता है, केवल कारण ही सत्य होता है ::	उत्तम + विशेष
13	Oct-13	38	⊕	⊕	⊕	सृष्टिक्रम :: सृष्टि के आदि में एक परमब्रह्म परमात्मा ही थे जिनसे पुरुष में छाया अथवा रज्जु में सर्प के समान एक माया का प्रादुर्भाव हुआ जिसने शुद्ध-सत्वगुण की प्रधानता से **'विद्या'** और मलिन-सत्वगुण की प्रधानता से **'अविद्या'** का रूप धारण किया। विद्यामाया में पड़ा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब-सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान **ईश्वर** कहलाया तथा अविद्या में पड़ा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब-अल्पज्ञ अल्पशक्तिमान **जीव** कहलाया। ईश्वर और जीव की सर्वज्ञता व अल्पज्ञता का भेद उपाधिकृत ही है। विद्या-अविद्या माया व्यापक ब्रह्म के प्रकाश को प्रकट करने की उपाधि मात्र हैं। छाया के समान माया, विद्या-अविद्या का भेद तथा उनमें पड़ा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब सभी कल्पित हैं अतः सत्य नहीं हैं किन्तु ब्रह्म सत्य-ज्ञान-आनंद से पूर्ण आधर-अधिष्ठान है। अधिष्ठान शुद्धब्रह्म + विद्यामाया + उसमें ब्रह्म का प्रतिबिम्ब = ईश्वर का वाच्यार्थ तथा अधिष्ठान शुद्धब्रह्म + अविद्यामाया + उसमें ब्रह्म का प्रतिबिम्ब = जीव का वाच्यार्थ। ईश्वर और जीव में चेतन अधिष्ठान भाग ही सत्य है अतः जब माया ब्रह्म में लीन हो जायेगी तो केवल एक शुद्ध ब्रह्म ही शेष रहेगा। जीव-ईश्वर कल्पित हैं तथा ये जगत जीव-ईश्वर की ही कल्पना है। 'ईक्षण से प्रवेश' पर्यन्त ईश्वर की तथा 'जा०स्व०सु०बन्ध मोक्ष' जीव की सृष्टि है। **वेदांत का सिद्धान्त यही निर्णय देता है कि माया, जगत, ईश्वर, जीव सब ब्रह्मरूप ही है** क्योंकि **एक ब्रह्म ही सत्य है व शेष सब मिथ्या है**, तो मिथ्या की निवृत्ति सत्य में हो जायेगी। अखंड रूप से इस प्रकार से स्थित होना यानि अपने को बाध करके ब्रह्मरूप जानना ही जीव का मोक्ष है। इस प्रकार ब्रह्म एक अद्वितीय है, सैकड़ों श्रुतियाँ इसकी प्रमाण हैं।	Veryl mp
14	Oct-14	30	⊕	⊕	⊕	सृष्टि क्रम :: ब्रह्म → आकाश → वायु → जल → पृथ्वी → औषधियाँ → अन्न → बीज → स्थूल शरीर। पंचभूत के पंचीकरण से हुए २५ तत्त्वों से सभी **स्थूलदेह** और अपंचीकृत पंचभूत से १६ तत्त्व के **सूक्ष्मदेह** बनते हैं तथा अपने स्वरूप को न जानना ही **कारणदेह** है, जिससे जा०-स्व०-सु० का संसार उत्पन्न होता है - इनों शरीरों का सविस्तार वर्णन इन्हीं के अन्तर्गत तीन अवस्थायें-'जा० -स्व०-सु०' एवं पंचकोष हैं :- अन्नमय = स्थूलदेह, प्राणमय + मनोमय + विज्ञानमय = सूक्ष्मदेह, आनंदमय कोष = कारणदेह । ३ शरीर, ३ अवस्थायें या ५ कोष - एक ही बात है। तीनों अवस्थाओं को हम देखते हैं पर हम तीनों से अलग हैं, ये शरीर हमारे हैं किन्तु हम शरीर नहीं हैं, हम इनों को गिनने वाले चौथे हैं। ये जगत/इनों अवस्थायें जड़-दृश्य हैं और हम चेतन-द्रष्टा हैं। द्रष्टा का स्वरूप **'सत्-चित्-आनंद'** है अतः हम शरीर नहीं हैं किन्तु इसे देखने वाले चेतन पुरुष/आत्मा हैं - जो इसप्रकार अपने स्वरूप को जानता है वह सर्वथा मुक्त है।	*** Capsule ***
15	Oct-15	36	⊕	⊕		वेद त्रिकाण्डमय हैं, ज्ञानकाण्ड में भगवान का स्वरूप निरूपण है, इसे वेदान्त कहते हैं। तैत्तरीयोपनिषद :: **'अस्ति भाति प्रियं रूपं नाम चेत्यंश पंचकम...'** संसार में पाँच अंश हैं - 'अस्ति भाति प्रिय' ब्रह्म का और 'नाम रूप' जगत का स्वरूप है। अस्ति का अर्थ है 'सत्', भाति का अर्थ 'चिद' और प्रिय का अर्थ 'आनंद' है = **'सच्चिदानंद'** :: लय-योग ::	
16	Oct-16	29	⊕	⊕		स्वरूप बोधक वाक्य 'अवांतर वाक्य' कहलाते है → भगवान का स्वरूप = **'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म'** तथा जीव का स्वरूप = **'यः ऐष हृदि अन्तर्ज्योति पुरुषः'।** 'महावाक्य' ब्रह्म और जीव का एकत्व बताते है → **'तत्त्वमसि',** जो अनन्त सत्य ज्ञान व आनंद है, हे जीव ! वही तेरा स्वरूप है। तटस्थ वाक्य द्वारा भगवान का स्वरूप → **'यतो वा ईमानि भूतानि जायंते..'** जिससे ये पंचभूत एवं सम्पूर्ण जगत उत्पन्न होता है, जिसमें रहता, जीता, चलता-फिरता और फिर जिसमें प्रवेश कर जाता है, वह ब्रह्म है। **:: जो जिसके एक देश में हो, कदाचित हो एवं व्यावर्तक हो वह उसका तटस्थ लक्षण होता है ::**	
17	Oct-17	51	⊕	⊕	⊕	**अन्नपूर्णोपनिषद : पाँच भ्रान्तियाँ :** १. भेद भ्रान्ति : ईश्वर-जीव भिन्न भिन्न हैं → दृ० - बिम्ब-प्रतिबिम्ब + ५ अन्य भेद भ्रान्तियाँ = जीव-जीव → दृ० - घट और घटाकाश, जीव-जगत, ईश्वर-जगत, जड़-जड़ → दृ० - स्वप्न तथा आत्मा में तीन और भेद = सजातीय, विजातीय एवं स्वगत २. कर्तृत्व-भोक्तृत्व भ्रान्ति ३. संग भान्ति ४. विकार भ्रान्ति : जगत परमात्मा का विकार है ५. जगत परमात्मा से भिन्न और सत्य है	1
18	Oct-18	37	⊕	⊕	⊕	**अन्नपूर्णोपनिषद : पाँच भ्रान्तियाँ :** १. भेद भ्रान्ति : ईश्वर-जीव भिन्न भिन्न हैं →अधिष्ठान अपनी आत्मा ब्रह्म है, वही सत्य है शेष सब भ्रान्ति यानि मिथ्या है। जीव-ईश्वर का भ्रम उपाधि से है वास्तव में नहीं है। जा०-स्व०/दे०इ०म०बु०प्राण-कार्य हैं, इनकी उपाधि से ब्रह्म जीव कहलाता है तथा सुषुप्ति-कारण उपाधि से ब्रह्म ईश्वर कहलाता है यदि कार्य-कारण उपाधि को छोड़ दें तो केवल ब्रह्म ही शेष रह जाता है अतः जीव-ईश्वर का भेद केवल वाच्यार्थ में है लक्ष्यार्थ में नहीं यानि भेद उपाधि के कारण है जैसे आकाश घट-मठ उपाधि से घटाकाश-मठाकाश तथा घटाकाश-मठाकाश की अपेक्षा से आकाश ही महाकाश कहलाता है पर घट-मठ उपाधि के बिना तो वह केवल आकाश ही है। हमारा वास्तविक स्वरूप सत्-चित्-आनंद से पूर्ण पुरुष है, ब्रह्म को ही पुरुष कहते हैं। पहले उपाधि होती है फिर उपाधि के अनुसार ब्रह्म का नाम पड़ जाता है २. कर्ता-भोक्ता भ्रान्ति : यदि मैं दे०इ०म०बु०प्रा० होऊँ तभी मैं कर्ता-भोक्ता हो सकता हूँ किन्तु मैं तो निनि०-द्रष्टा-साक्षी-चेतन हूँ तो मैं कर्ता-भोक्ता कैसे हो सकता हूँ। **आत्मा अकर्म है**, जीव को कर्म अथवा कर्तृत्व-भोक्तृत्व की भान्ति है, **सभी कर्म प्रकृति में हैं** → दृ० - स्फटिकमणि और लालफूल :: साभासबुद्धि में ही कर्म हैं, बुद्धि में आत्मा के प्रतिबिम्ब पड़ने से कम्पन होता है और दे०इ०म०बु०प्रा० कर्म करने लगते है। आत्मा इनका प्रेरक मात्र है।	2
19	Oct-19	31	⊕	⊕		विराट स्वरूप दर्शन :: सीता-राम जगत के माता पिता हैं, सीताराम से ही जगत की उत्पत्ति होती है और पुनः इन्हीं में लीन हो जाता है। सीताराम का ही स्वरूप निरूपण रामायण में किया गया है। लक्ष्मी-नारायण, राधा-कृष्ण, गौरी-शंकर व माया-पुरुष सब इन्हीं के नाम हैं, अव्यक्त नाम की परमात्मा की अनादि शक्ति है - अविद्या, त्रिगुणात्मका, परा और माया भी इसके नाम हैं जो क्षण मात्र में अनंतकोटि ब्रह्माण्ड निर्माण कर देती है इसीलिये इसे माया कहते हैं तथा सब नाम-रूप अलग-२ हैं। भगवान राम के शरीर में ही ये माया अनंतकोटि ब्रह्माण्ड दिखा देती है। भगवान राम ही सत्य हैं उनकी संकल्प शक्ति अथवा माया से ही इस जगत की उत्पत्ति है अतः **'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या...'** अर्थात् ब्रह्म ही सत्य है जगत मिथ्या है और जीव तो ब्रह्म ही है।	उत्तम + सरल
20	Oct-20	45	⊕	⊕		**अन्नपूर्णोपनिषद : पाँच भ्रान्तियाँ :** १. भेद भ्रान्ति : ईश्वर-जीव भिन्न भिन्न हैं →घटा-मठाकाश का आकाश महाकाश का ही शरीर है परन्तु आकाश खण्ड-खण्ड नहीं होता, वह अखण्ड ही रहता है। इसी प्रकार सुषुप्ति रूपी अज्ञान की उपाधि से ब्रह्म को ईश्वर तथा जा०स्व० के शरीरों की उपाधि से ब्रह्म को ही जीव कहते हैं। दोनों उपाधियों को छोड़ देने पर एक ब्रह्म ही शेष रहता है। जीव-ईश्वर वास्तव में एक ही हैं, केवल उपाधि भेद से दो मालूम पड़ते हैं २. कर्ता-भोक्ता भ्रान्ति : हमारा तुम्हारा आत्मा में कर्तृत्व-भोक्तृत्व नहीं है वह ज्ञान प्रकाश रूप ही है स्फटिकमणि के समान, किन्तु अन्तःकरण (दे०इ०म०बु०प्राण) के धर्म आत्मा में मालूम पड़ते हैं। सुषुप्ति में ये हट जाते हैं तब आत्मा ज्यों का त्यों शुद्ध ही रहता है किन्तु जागने पर दे०इ०म०बु०प्राण में अहंभाव होने पर कर्तृत्व-भोक्तृत्व की भ्रान्ति होती है→ दृ०-स्फटिकमणि और लालफूल, वास्तव में आत्मा द्रष्टा-साक्षी मात्र है ३. संग भ्रान्ति :: स्थू०सू०का० तीनों शरीरों का आत्मा से संग हो गया है ये भ्रान्ति है, जिससे इनके धर्म आत्मा में भासते हैं किन्तु जैसे → दृ० घटा-मठाकाश में आकाश घट-मठ से असंग ही रहता है वैसे ही आत्मा तीनों शरीरों से असंग रहता है।	3
21	Oct-21	30	⊕	⊕	⊕	वेद मे भगवान के दो स्वरूप का वर्णन है १. स्वरूप लक्षण :: सत्यं ज्ञानं अनंतं ब्रह्म' → ब्रह्म अनंत सत्य, अनंत ज्ञान एवं आदि अंत रहित आनंद है २. तटस्थ लक्षण :: जो जिसके एक देश में हो, व्यावर्तक हो यानि अलगाके बताने वाला हो और कदाचित हो वस्तुतः ब्रह्म की साभास-माया से ही जगत उत्पन्न होता है। स्वरूप बोधक वाक्य **'अवान्तर वाक्य'** कहलाते है दृ० -	

						‘सत्यं ज्ञानं अनंतं ब्रह्म’ = भगवान का स्वरूप एवं ‘यः ऐष हृदि अन्तर्ज्योति पुरुषः’ = जीव का स्वरूप है तथा ब्रह्म और जीव के एकत्व बोधक वाक्य **‘महावाक्य’** कहलाते हैं दृ० - ‘तत्वमसि’ = जो ब्रह्म है वह तू है और जो तू है वह ब्रह्म है।	
22	Oct-22	46	⊕	⊕		त्रि०वेदानुसार भगवान के ज्ञान के साधन कर्म, उपासना और ज्ञान हैं किन्तु ‘कर्म और उपासना’ से अज्ञान का नाश नहीं होता, केवल ज्ञान ही अज्ञान का नाश करने में समर्थ है जैसे अन्धकार का नाश प्रकाश से ही होता है। यद्यपि कर्म-उपासना अवश्य ही ज्ञान प्राप्ति के आवश्यक साधन हैं किन्तु ज्ञान बिना अज्ञान नष्ट नहीं होता जैसे दीपक, तेल, बाती व माचिस केवल साधन मात्र हैं, किसी चेतन पुरुष द्वारा दीपक जलाये बिना प्रकाश सम्भव नहीं। अज्ञान कारण है और दे०इ०म०बु० कार्य हैं इनके नाश के लिये ब्रह्म ज्ञान ही अभीष्ठ है :: कर्म से भक्ति व भक्ति से ‘ज्ञान और वैराज्ञ’ २ वीर पुत्र उत्पन्न होते हैं फिर ब्रह्म के दर्शन होने लगते हैं दृ०-रावण अज्ञान का प्रतीक है, राम ज्ञान और लक्ष्मण वैराज्ञ के, ज्ञान-वैराज्ञ से अज्ञान का नाश सम्भव हुआ	
23	Oct-23	34	⊕			जा०-स्व०-सु० और तुरीय ये ४ अवस्थाऐं हैं। वर्तमान में जा० का संसार है जिसमें सब व्यवहार है, जब ये संसार मन में लीन हो जाता है और मन में सूक्ष्म संसार दिखाई पड़ता है उसे स्वप्नावस्था कहते हैं और सुषुप्ति अवस्था में मन भी लीन हो जाता है तो ये संसार भी नहीं दिखाई पड़ता जो अज्ञान अंधकार रूप है, ये सुषुप्ति ही ‘कारणरूप’ एवं जा०-स्व० का संसार ‘कार्यरूप’ माया है, उसके आगे तुरीय है तुरीय नाम चौथे का है, वह ब्रह्म अथवा हमारी तुम्हारी आत्मा का स्वरूप है। जा०-स्व०-सु० ‘असत् जड़ दुःखरूप’ है तथा इसे हम ‘सत् चिद सुखरूप’ ब्रह्म/आत्मा ही देखता है। जिसे अपने तुरीय स्वरूप का ज्ञान हो जाता है वह सच्चिदानंद स्वरूप ही हो जाता है। ब्रह्म और आत्मा तो एक ही है।	
24	Oct-24	45	⊕	⊕	⊕	**अन्नपूर्णोपनिषद** **: पॉंच भ्रान्तियॉं :** **१.** **भेद भ्रान्ति** : ईश्वर-जीव भिन्न भिन्न हैं → बिम्ब-प्रतिबिम्ब के दृ०से इस भ्रम की निवृत्ति हो जाती है - बिम्ब-प्रतिबिम्ब वास्तव में दो नहीं हैं एक ही है। दर्पण में हमारा सत्य मुख दर्पण में प्रतिबिम्ब के रूप में दीखता है किन्तु वह झूठा है इसीप्रकार जीव प्रतिबिम्ब है और ईश्वर बिम्ब है **२.** **कर्ता-भोक्ता भ्रान्ति** : सूक्ष्मशरीर के धर्म हमारी आत्मा में भासने से आत्मा में कतृत्व-भोक्तृत्व की भ्रान्ति होती है तथा स्फटिकमणि और लाल फूल के दृ०से इस भ्रम की निवृत्ति हो जाती है। जागृत-स्वप्न में ही दे०इ०म०बु० होते हैं और सुषुप्ति में ये मिट जाते हैं अतः सुषुप्ति में हमें स्त्री-पुरुष आदि का भान नहीं रहता **३.** **संग भ्रान्ति** :: स्थू०सू०का० तीनों शरीरों का आत्मा से संग हो गया है ये भ्रान्ति है, जिससे इनके धर्म आत्मा में भासते हैं किन्तु जैसे → दृ० घटा-मठाकाश में आकाश घट-मठ से असंग रहता है वैसे ही आत्मा तीनों शरीरों से असंग रहता है। हमारा आत्मा आकाश से भी सूक्ष्म, व्यापक, नित्य सत्य, असंग, दृष्टा-साक्षी है घट-मठ तो बनते-बिगड़ते रहते है पर आत्मा सदा एकसा रहता है **४.** **विकार भ्रान्ति** : यह भ्रम है कि - ये जगत अपने कारण ब्रह्म का विकार है। वस्तुतः जगत ब्रह्म का विवर्त और माया का परिणाम है, माया से ब्रह्म ही जगतरूप में दिखाई पड़ता है। अधिष्ठान आत्मा के अज्ञान से ही ये संसार भासता है जैसे मन्द अन्धकार में रज्जु सर्परूप भासती है। ये सब माया का विकार है, माया यानि अज्ञान जो सत्य को ढॉंक कर झूठे को दिखा देती है जो सत्य की तरह भासता है।	4
25	Oct-25	37	⊕	⊕	⊕	**अन्नपूर्णोपनिषद** **: पॉंच भ्रान्तियॉं :** **१.** **भेद भ्रान्ति** : ईश्वर-जीव भिन्न भिन्न हैं → बिम्ब-प्रतिबिम्ब के दृ०से इस भ्रम की निवृत्ति हो जाती है - दर्पण में हमारे मुख का प्रतिबिम्ब पड़ता है तो प्रतिबिम्ब की अपेक्षा से हमारा मुख बिम्ब कहलाता है। ब्रह्म का माया में प्रति० ‘ईश्वर’ और अविद्या में प्रति० ‘जीव’ कहलाता है अतः दोनों उाधियों को छोड़ देने पर शुद्ध ब्रह्म ही शेष रहता है अतः जीव-ईश्वर केवल उपाधि भेद से भिन्न हैं पर दोनों का शुद्ध स्वरूप तो ब्रह्म ही है **२.** **कर्ता-भोक्ता भ्रान्ति** : सूक्ष्मशरीर के धर्म हमारी आत्मा में भासने से आत्मा में कतृत्व-भोक्तृत्व की भ्रान्ति होती है तथा स्फटिकमणि और लाल फूल के दृ०से इस भ्रम की निवृत्ति हो जाती है। आत्मा तो अकर्ता-अभोक्ता केवल द्रष्टा साक्षी है **३.** **संग भ्रान्ति** :: स्थू०सू०का० तीनों शरीरों का आत्मा से संग हो गया है ये भ्रान्ति है, आत्मा शरीर में रहता हुआ भी शरीर से वैसे ही असंग रहता है जैसे घटाकाश - मठाकाश घट-मठ से असंग रहता है **४.** **विकार भ्रान्ति** : ये जगत अपने कारण ब्रह्म का विकार है-यह भ्रम है। रज्जु-सर्प के दृ० से विकार भ्रान्ति दूर हो जाती है, रज्जुरूप आत्मा के अज्ञान से शरीररूपी सर्प दीखता है। जन्म-मरण विकार प्रकृति में हैं, मैं तो द्रष्टा हूँ **५.** जगत परमात्मा से भिन्न और सत्य है : दृ० कनक-रुचक : सुवर्ण से आभूषण बनते हैं, ये आभूषण सुनार की कल्पना हैं, सुवर्ण सदा एकसा रहता है वह कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है। सोने में कोई आभूषण नहीं हैं पर सभी आभूषण सोना ही हैं। हमारा आत्मा सुवर्णरूप है और नाम-रूप काल्पनिक हैं, सर्वत्र अस्ति-भाति-प्रिय से भगवान व्याप्त हैं।	उत्तम 5 संपूर्ण
26	Oct-26	43	⊕			संक्षेप में चार कृपाऐं :: १. ईश्वर कृपा - नर शरीर प्राप्ति २. वेद कृपा ३. गुरु कृपा ४. आत्म कृपा :: **सामवेद/छा०उ०/७तवॉं अध्याय**/ नारद-सनत्कुमार सम्वाद :- नारदजी द्वारा अपनी विद्याओं का वर्णन - (आरम्भ)	1
27	Oct-27	29	⊕			भगवान के दर्शन में तीन प्रतिबन्ध हैं - मल-विक्षेप-आवरण, जिनके निवारण हेतु त्रि० वेद में क्रमशः निष्काम कर्म-उपासना-ज्ञान प्रतिपाद्य है। **कर्म** :: नि०कर्म से अनेक जन्मों के पापों का नाश तथा चित्त शुद्ध होता है, वेद विहित कर्म ही धर्म हैं, ४ वर्ण की सृष्टि भगवान ने की है उनके वर्णाश्रमपदाधिकार के विहित कर्म ‘विशेष धर्म’ और सभी वर्णाश्रम के समान कर्म ‘सामान्य धर्म’ कहलाते हैं। भगवान जगत के माता-पिता-धाता और पितामह भी हैं, ये दृश्य जगत मायाकृत है केवल एक भगवान ही सत्य हैं।	
28	Oct-28	49	⊕			**सामवेद/छा०उ०/७वॉं अध्याय**/ **नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: नारदजी द्वारा अपनी विद्याओं का वर्णन→वेद, इतिहास (महाभारत), १८ पुराण, व्याकरण (वेद के ६ अंग = शिक्षा, कल्प, **व्याकरण**, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष) पितृं, राशिं, दैवं उत्पात् ज्ञानं, निधिं +..	2
29	Oct-29	30	⊕	⊕		**भगवान विष्णु का प्रथम जीव ब्रह्मा को उपदेश ::** हे ब्रह्मन् ! मनुष्यों के कल्याण के लिये मैंने ३ योग कहे हैं, अनेक जन्मों के पापों के नाश हेतु-**कर्मयोग**, चित्त एकाग्रता हेतु-**भक्तियोग** तथा अज्ञान के नाश से भगवत् स्वरूप के अनुभव हेतु-**ज्ञानयोग**। सृष्टि के आदि में एक ब्रह्म ही था जिससे सर्वप्रथम पुरुष की छाया के समान महामाया शक्ति प्रकट हुई, उसने शुद्ध सत्वगुण प्रधान **‘विद्या’** व मलिन सत्वगुण प्रधान **‘अविद्या’** दो रूप धारण किये । इन दोनों विद्याओं ने ब्रह्म का प्रतिबिम्ब धारण कर क्रमशः ईश्वर और जीव की संज्ञा प्राप्त की .. अधि०ब्रह्म+विद्यामाया+ब्रह्म का प्रति०=ईश्वर और अधि०ब्रह्म+अविद्यामाया+ब्रह्म का प्रति०=जीव .. ईश्वर-जीव दोनों का साक्षी क्रमशः ब्रह्म और कूटस्थ यानि शुद्धब्रह्म है। ईश्वर सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान एवं जीव अल्पज्ञ, अल्पशक्तिमान हुआ । ‘ईक्षण से प्रवेश पर्यन्त’ ← **ईश्वर की सृष्टि** है तथा **जीव की सृष्टि** → जा०-स्व०-सु० + बन्ध और मोक्ष’ है। माया ने ब्रह्म के प्रतिबिम्ब को धारण कर ईश्वर और जीव की संज्ञा प्राप्त की पर दोनों ही मिथ्या हैं। शरीर में सुन्दरता व प्रियता जीवात्मा से है, उसके निकलने पर देह असुन्दर और भयानक/मुर्दा हो जाता है। विद्या-अविद्या दोनों माया और उनमें पडे ब्रह्म के प्रतिबिम्ब सभी कल्पित होने से मिथ्या हैं यानि ये ईश्वर, जीव, जगत सब मिथ्या है एक ब्रह्म ही सत्य है -‘ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या..’ हमारा वास्तविक स्वरूप ब्रह्म है, देह इ०म०बु०प्राण सब छायारूप माया है।	
30	Oct-30	55	⊕			**सामवेद/छा०उ०/७वॉं अध्याय**/ **नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: नारदजी द्वारा अपनी विद्याओं का वर्णन→४रों वेद, इतिहास (महा भारत), १८ पुराण, व्याकरण (वेद के ६ अंग = शिक्षा, कल्प, **व्याकरण**, छन्द, निरुक्त, ज्योतिष) पितृं, राशिं, दैवं उत्पात् ज्ञानं, निधिं, वाकोवाक्यं, एकायनं, देवविद्यां (यज्ञादि), ब्रह्मविद्यां (उपनिषद), क्षत्रविद्यां, नक्षत्रविद्यां, सर्पविद्यां, भूतविद्यां, देवजनविद्यां (संगीत) → इतना मैंने अध्ययन किया है पर हे प्रभु ! अपने आत्मा/वास्तविक स्वरूप को मैं नहीं जानता। ऐसा मैंने सुना है कि जो अपनी आत्मा को जानता है वह सब दुःखों से मुक्त/शोक सागर के पार हो जाता है अतः आप मुझे आत्मा का स्वरूप बतायें।	3
31	Oct-31	33	⊕			भगवान के ज्ञान का साधन वेद हैं। वेद कहता है कि भगवान का स्वरूप सचिदानंद ब्रह्म है। ब्रह्म में एक महामाया शक्ति का प्रादुर्भाव होता है और वह ‘जा०स्व०सु०’ तीन रूप धारण करती है। **समष्टि-निद्रा** समष्टि-संसार को उत्पन्न करती है और **व्यष्टि -निद्रा** व्यष्टि-संसार उत्पन्न करती है। समष्टि-निद्रा ईश्वर की शक्ति है क्योंकि शक्ति से ही ये संसार उत्पन्न होता है तथा व्यष्टि -निद्रा जीव की शक्ति है जो व्यष्टि-संसार/थोड़ासा संसार/अद्भुत् स्वप्न बना देती है दृ० ऋषि व मल्लाह-कन्या की कथा	
32	Oct-32	55	⊕	⊕		**सामवेद/छा०उ०/७वॉं अ०**/नारद-सनत्कुमार सम्वाद :: अपनी विद्याओं का वर्णन करते हुए, भगवान को न मानने वाले नास्तिक से तर्क देते हुए नारदजी बोले कि **‘कार्य को देखकर कारण का ज्ञान होता है’** जैसे धुऐं से अग्नि का । गीता में भगवान ने कहा है कि मैं ही पिता माता पितामह हूँ तथा प्रपितामह और धाता भी हूँ । मेरा सर्वश्रेष्ठ नाम ओंकार है, ओंकार का विस्तार ही ४रों	4

						वेद हैं जो मुझे जानने के साधन हैं अतः मैं ही साध्य हूँ और मैं ही साधन भी । भगवान ही जगत के अभिन्न निमित्तोपादान कारण हैं, भगवान से ही ये जगत उत्पन्न होता है, भगवान में ही रहता और भगवान में ही विलीन हो जाता है, हु० मकड़ी,लोम	
33	Oct-33	31	⊕			सृष्टि के आदि में भगवान ने प्रथम जीव ब्रह्मा से कहा कि मनुष्यों के श्रेय सुख के लिये मैंने ३ योग कहे हैं - कर्म, भक्ति और ज्ञानयोग। श्रेयसुख नित्य है। मेरी चतुर्वर्णीय सृष्टि है अतः वर्णाश्रम-पदाधिकार के अनुसार व्यावहारिक वेद-विहित कर्तव्यकर्म ही **कर्मयोग** है। सभी वर्णों के लिये समान विहित कर्म **'सामान्य कर्म'** तथा वर्णविशेष के लिये विहित कर्तव्य-कर्म **'विशेष कर्म'** कहलाते हैं जो इस प्रकार हैं :- .. ब्राह्मण → शम, दम, तप, शौच, क्षान्ति, आर्जवम्, संतोष, ज्ञान, विज्ञान क्षत्रिय → शौर्य, तेजं, धैर्यं, दक्ष्यं, अपलायनं, ईश्वरभाव वैश्य → गौरक्षा, वाणिज्य, कृषि शूद्र → बड़े भाईयों की सेवा ..	5
34	Oct-34	40	⊕	⊕		**सामवेद/छा०उ०/७वाँ अ०/नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: अपनी समस्त विद्याओं का उल्लेख तथा वाकोवाक्यं/तर्कशास्त्र का सविस्तार वर्णन। भगवान ही जगत के अभिन्न निमित्तोपादान कारण हैं। भगवान अपनी महामाया शक्ति से क्षण मात्र में विश्व-विराट का रूप धारण कर लेते हैं हु० भग० राम-कृष्ण द्वारा क्रमशः कौशल्या-यशोदा अम्बा व अर्जुन को विश्व-विराट दर्शन	6
35	Oct-35	31	⊕	⊕		**'कर्म-उपासना-ज्ञान'** वेद त्रिकाण्डमय है। कर्मकाण्ड से चित्तशुद्धि, उपासना से चित्तनैश्चल्यं तथा ज्ञानकाण्ड से ब्रह्म ज्ञान होता है। ज्ञानकाण्ड में भगवान के स्वरूप का ही निरूपण है। भगवान के ज्ञान के पश्चात वेद निष्प्रयोजन हो जाते हैं। ये संसार दुःखों का समुद्र है। अर्जुन! जब तक जीव मुझे नहीं पाता है तब तक वह इस दुःख समुद्र में भटकता रहता है। इस भवसागर से पार होने के लिये वेद नौका और गुरु मल्लाह हैं। ब्रह्म को जानना ही पार होना है। ये शरीर भी एक नौका ही है। जब गुरु वेदरूपी नौका में बैठाकर पार कर देता है तो ब्रह्मज्ञान के पश्चात वेद निष्प्रयोजन हो जाते हैं .. अहं का सच्चा अर्थ ब्रह्म ही होता है शरीर नहीं, शरीर तो नौका है व हम इस शरीर रूपी नौका में बैठने वाले हैं तो बैठने वाला तो नौका नहीं हो सकता अतः वेद का महावाक्य कहता है 'अहं ब्रह्मास्मि'। हम द्रष्टा हैं व शरीर दृश्य है। गुरु तो हमारे स्वरूप को ही बता देते हैं। हम भ्रमवश स्वयं को शरीर मानते हैं तो गुरु ने यह बता दिया कि **'अपना स्वरूप ब्रह्म है'** बस, वैसे जीव तो ब्रह्म पहले से ही है ..	
36	Oct-36	36	⊕	⊕		**सामवेद/छा०उ०/७वाँ अ०/नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: तर्कशास्त्र/शब्द प्रमाण द्वारा नास्तिकों को परास्त करने का सविस्तार वर्णन। **छः प्रकार के प्रमाण** ::- १ प्रत्यक्ष प्रमाण - इन्द्रियों द्वारा ज्ञान २ अनुमान प्रमाण - कार्य को देखकर कारण का ज्ञान, जैसे धुँएँ से अग्नि का ३ उपमान प्रमाण - जिसकी उपमा देकर किसी को बताया जाय, जैसे गउ की उपमा से गवै यानि नील गाय का ज्ञान ४ अर्थापत्ति - जैसे दिन में भोजन न करने वाला मोटा-ताजा हो अर्थात् वह रात्रि में खाता है ५ अनुपलब्धि - अभाव का ज्ञान ६ शब्द प्रमाण - यानि वेद प्रमाण। दो ब्रह्म हैं, पहला परम ब्रह्म और दूसरा भगवान की वाणी शब्दब्रह्म अर्थात् वेद जो सर्वज्ञ भगवान की वाणी ही भगवान को बता सकती है। वेद द्वारा जीव अपने स्वरूप को जानकर ब्रह्मरूप ही हो जाता है। 'ब्रह्मसुख' नित्यसुख है जिसका कभी नाश नहीं होता, यही श्रेयसुख है, इन्द्रियसुख अथवा प्रेयसुख क्षणिक है।	7
37	Oct-37	32	⊕			'कर्म-उपासना-ज्ञान' वेद में तीन काण्ड हैं। कर्मकाण्ड - निष्काम कर्म से पापों का नाश व चित्त शुद्धि, भक्तिकाण्ड से चित्त एकाग्रता और ज्ञानकाण्ड अज्ञान का नाश करता है। जीव को भगवान के ज्ञान में 'मल-विक्षेप-आवरण' ३ प्रतिबन्ध हैं इनकी निवृत्ति हेतु ही भगवान ने वेद द्वारा नि०कर्म, भक्ति और ज्ञान का उपदेश किया है अन्यथा भगवान तो जीव को नित्य ही प्राप्त हैं क्योंकि जीव ईश्वर का ही अंश है।कर्मकाण्ड में सामान्य एवं वर्णाश्रमपदाधिकार के अनुसार विशेष विहितकर्मों का प्रतिपादन है।	
38	Oct-38	53	⊕	⊕		**वेद** का अर्थ ब्रह्म है क्योंकि ब्रह्म को बताना ही वेदों का प्रयोजन है, वेद भगवान से ही प्रकट हुए हैं। भगवान को पाकर जीव इस दुःख/मृत्यु के संसार से पार हो जाता है। **सामवेद/छा०उ०/७वाँ अ०/नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: अपनी समस्त विद्याओं का वर्णन तथा भगवान राम और इन्द्र पुत्र जयन्त का प्रसंग। हे भगवन! अब मुझे आत्मज्ञान देकर शोक सागर से पार करें।	8
39	Oct-39	43	⊕	⊕	⊕	**सामवेद/छा०उ०/७वाँ अ०/नारद-सनत्कुमार सम्वाद** :: **नारद उवाच** - हे प्रभो मैं केवल मंत्रों का ही ज्ञान हूँ पर मैं आत्मा को नहीं जानता हूँ अतः मुझे आत्मज्ञान दें .. आत्मज्ञान .. **सनतकुमारजी बोले** - हे नारद! जो भूमा है वही सुखरूप हैं भूमा नाम महान अथवा ब्रह्म का है जो सबसे बड़ा है। अल्प में सुख नहीं है। ये संसार अल्प है व ब्रह्म की तिलभर जगह में पड़ा है अतः भूमा को ही जानना चाहिये। **भूमा तत्त्व** ::- जहाँ इ०म०बु० आदि की पहुँच नहीं है वह भूमा है। इन्द्रियाँ जिसे देख नहीं सकतीं व मन-बुद्धि जहाँ पहुँच नहीं सकतीं, जहाँ से मन सहित वाणी लौट आती है, वह भूमा है। जो अन्य को देखता-सुनता- कहता है यानि जिसे ये इ०म०बु० से जानता है वह अल्प/संसार है। मायारूपी पवन से मुझ अनंत आनंद सिन्धु में तरंगरूपी अनंत कोटि ब्रह्माण्ड उत्पन्न और विलीन होते रहते हैं, लहरें तो केवल नाम-रूप हैं। जल ही सत्य है। भगवान् कहते हैं कि ये चराचर जगत वासुदेव ही है। दिखाई देने वाली लहरें वास्तव में जलरूप आनंद सिन्धु ब्रह्म ही है। मायारूपी पवन से सच्चिदानंद परमात्मा ही तरंगायमान हुआ है अतः सच्चिदानंद सिन्धु ब्रह्म ही सत्य है, वही हमारा तुम्हारा आत्मा/स्वरूप है। जो ब्रह्म है वही आत्मा है और आत्मा ही ब्रह्म है। हे अर्जुन वेदान्त यही कहता है कि माया, जीव, जगत सब ब्रह्म ही है। द्रष्टा ब्रह्म सत्य है तथा दृश्य माया है, झूठा है।	9
40	Oct-40	28	⊕			**सीताजी द्वारा भगवान राम का निनि० स्वरूप निरूपण** :- 'रामं विद्धि परं ब्रह्म सच्चिदानंदम् अद्वययं, सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं सत्तामात्रं अगोचरं । आनंदं निर्मलं शान्तं निर्विकारं निरंजनं, सर्वव्यापिन आत्मानं स्वप्रकाशं अकल्मषं ।।'	
41	Oct-41	44	⊕	⊕	⊕	वेद में भगवान का स्वरूप २ प्रकार का बताया है १. **स्वरूप लक्षण** - 'सत्यं ज्ञानं अनंतम् ब्रह्म' २. **तटस्थ लक्षण** - संसार जिसके एक देश में है, व्यावर्तक है और कदाचित है, श्रुति के द्वारा - 'यतो वा ईमानि जायंते..' । वेद के अवान्तर वाक्य द्वारा **ब्रह्म का स्वरूप** = 'सत्यं ज्ञानं अनंतम् ब्रह्म', **जीव का स्वरूप** = 'ये एष हृदि अन्तर्ज्योतिः पुरुषः' । **महावाक्य** त्र 'तत्त्वमसि' यानि जो ब्रह्म है वही तेरा स्वरूप है। महावाक्य ब्रहम ओर जीव का एकत्व बताता है .. ब्रह्म - ईश्वर - जीव - माया का स्वरूप निरूपण .. संसार और ब्रह्म ज्ञान में 'वृत्ति-व्याप्ति' और 'फल-व्याप्ति' की प्रक्रिया का सविस्तार Clear वर्णन	मुख्य एवं अति विशिष्ट
		00	⊕	⊕	⊕	प्रवचनअनुपलब्ध	NA